जैन साधना का तृतीय आयाम—

अदत्तादान-विरमण की वर्तमान प्रासंगिकता

—ब्रजनारायण शर्मा
(प्रवाचक, दर्शन विभाग, सागर विश्वविद्यालय, सागर)

जैन धर्म साधना तथा आचार का भव्य प्रासाद पंच आयामों की पुष्ट आधारशिला पर टिका हुआ है। कहते हैं कि भगवान महावीर के पूर्व जैन धर्म चतुर्आयामी ही था, उन्होंने इसमें पंचम आयाम 'ब्रह्मचर्य' की जोड़कर जैन धर्म को पंच आयामी धर्म बनाया। पंच आयाम इस प्रकार हैं—(१) अहिंसा, (२) सत्य, (३) अस्तेय, (४) अपरिग्रह एवं (५) ब्रह्मचर्य। प्रस्तुत निबन्ध में तृतीय आयाम 'अस्तेय' की विवेचना करना अभीष्ट है। 'दशवैकालिक सूत्र' में इसकी व्याख्या करते हुए कहा है—

चित्तमंतमचित्तं वा, अप्पं वा जइ वा बहुं।
दंतसोहणमित्तंपि, उग्गहं से अजाइया॥
तं अप्पणा न गिण्हन्ति, नो वि गिण्हावए परं।
अन्नं वा गिण्हमाणंपि नाणुजाणन्ति संजया॥

—अध्याय ६ गाथा १४-१५

अर्थात्—पदार्थ सचेतन हो या अचेतन, अल्प हो या बहुत, यहाँ तक कि दाँत कुरेदने वाली सींक जैसी तुच्छ वस्तु ही क्यों न हो, पूर्ण संयमी साधक दूसरों की वस्तु को उनकी अनुमति के बिना न तो स्वयं ग्रहण करते हैं, न दूसरों को ग्रहण करने के लिए प्रेरित करते हैं और न ग्रहण करने वालों का अनुमोदन करते हैं। आशय यह है कि जो व्यक्ति दूसरों की तृणमात्र वस्तु भी यदि स्वयं चुराता है या चोरी करने की इच्छा करता है अथवा दूसरों को चुराने हेतु प्रेरित या उनके चुराने का अनुमोदन करता है वह चोर है और जो व्यक्ति इस प्रकार के कृत्यों का सर्वदा और सर्वथा त्याग करता है वह अस्तेय का पालक है। स्तेय का अर्थ है चोरी करना और चोरी न करना अस्तेय कहलाता है। उत्तराध्ययन सूत्र में भी यही बात दोहराई गयी है (अध्याय १९ गाथा २७)। 'सूत्रकृतांग' की गाथाएँ और भी स्पष्ट उद्घोषणा करती हैं—

तिव्वं तसे पाणिणो थावरे य, जे हिंसति आयसूय पडुच्च।
जे लूसए होई अदत्तहारी, ण सिक्कई सेय वियस्स किंचि॥
उड्ढं अहे य तिरियं दिसासु, तसा य जे थावर जे य पाणा।
हत्थेहिं पाएहिं य संजमित्ता, अदिन्नमन्नेसु य नो गहेज्जा॥

—सू. ५/१/४, १/१०/२

अर्थात् जो मनुष्य अपने सुख के लिए त्रस तथा स्थावर प्राणियों की क्रूरतापूर्वक हिंसा करता है, उन्हें अनेक प्रकार से कष्ट पहुँचाता है एवं दूसरों की चोरी करता है और आदरणीय व्रतों का कुछ भी

साध्वीरत्न कुसुमवती अभिनन्दन ग्रन्थ
Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पालन नहीं करता वह भयंकर क्लेश और विषाद उठाता है। अतः संयमी साधक को ऊँची-नीची तथा तिरछी दिशाओं में जहाँ कहीं भी त्रस और स्थावर प्राणी रहते हों—विचरते हों उन्हें संयम से रहकर अपने हाथों से, पैरों से या किसी भी अंग से पीड़ा नहीं पहुँचानी चाहिए। दूसरों की बिना दी हुई वस्तु भी चोरी से ग्रहण नहीं करना चाहिए।

परवस्तुहरण चौर्य कर्म है और इस कुटेव का सर्वथा परित्याग अचौर्य या अस्तेय है। अचौर्य या अस्तेय का अर्थ चोरी न करना तो है ही परन्तु यह पद निषेधपरक ही नहीं है। इसकी विधिपरक व्याख्या भी की जा सकती है। ईमानदारी, अधिकार और कर्तव्य के प्रति जागरूक रहकर उनका सम्यक् उपभोग करना भी अचौर्य वृत्ति में सम्मिलित है।

अधिकारों का अपहरण, शोषण करना, दूसरों को अपना गुलाम (दास) बनाना, लोगों के स्वत्व छीनकर उन्हें अपने आदेश मनवाने हेतु बाध्य करना आदि गर्हित कार्य स्तेय वृत्ति के ही उपजीवी हैं। किसी भी अवस्था में जीवनोपयोगी आवश्यक मूल्यों का अपहरण न करना ही अस्तेय है।

श्रमण परम्परा के दूसरे स्तम्भ बौद्ध धर्म में भी पंचशील के अन्तर्गत अस्तेय की गणना की गयी है। अष्टांगिक आर्य मार्ग के पंचम सोपान की चर्चा करते हुए बौद्ध धर्म में भी कहा गया है कि जीवन-यापन तथा जीवन-रक्षण हेतु मानव मात्र को किसी न किसी जीविका को अपनाना आवश्यक है किन्तु जीविका सम्यक् होनी चाहिए। इससे न तो किसी प्राणी को किसी प्रकार का क्लेश पहुँचना चाहिए और न उनकी हिंसा। इसीलिए 'लक्खण सुत्त'—३ में भगवान बुद्ध ने निम्नांकित जीविकाओं को गर्हणीय और हेय बतलाया है—तराजू की ठगी, कंस की ठगी, मान की ठगी, रिश्वत लेना, वंचना, कृतघ्नता, डाका-लूटपाट आदि। इस धर्म में भी अस्तेय को पंचशीलों में तृतीय शील ही बतलाया गया है।

वैदिक परम्परा में भी अस्तेय पर पर्याप्त विचार-विमर्श हुआ है। मनुस्मृतिकार यमों की महत्ता बतलाते हुए कहते हैं—

यमान सेवेत सततं न नियमान केवलान बुधः।
यमान पतत्य कुर्वाणो नियमान केवलान भजन्॥

अर्थात् बुद्धिमान व्यक्तियों को सतत यमों का सेवन (पालन) करना चाहिए, केवल नियमों का नहीं क्योंकि नियमों का पालन करने वाला यमों के पालन के अभाव में गिर जाता है। महर्षि पतंजलि ने अपने 'योगसूत्र' के साधनपाद के सूत्र ३० में अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह एवं ब्रह्मचर्य को यम कहा है। यहां भी अस्तेय के ऊपर दो और नीचे दो यम रखे गये हैं अर्थात् अस्तेय तृतीय स्थान पर ही रखा गया है। यम-नियम के पालन के बिना कोई भी साधनारत अभ्यासी योगी नहीं बन सकता। योगाभ्यासी या अधिकारी ही नहीं वरन् इनका पालन सभी आश्रमवासियों के लिए आवश्यक है। यमों का सम्बन्ध सम्पूर्ण मानव समाज से बड़ा घनिष्ठ है। अतः इनके पालन में सभी परतन्त्र हैं। ये मानव के परम कर्तव्य हैं। इसीलिए अगले इकत्तीसवें सूत्र में महर्षि पतंजलि ने इन यमों को जाति, देश, काल तथा समय (अवस्था विशेष या विशेष नियम) की सीमा से परे बतलाया है। इन्हें सार्वभौम महाव्रतों की संज्ञा दी गयी है। आशय यह, कि यमों का पालन किसी जाति विशेष, देश विशेष, काल विशेष या अवस्था विशेष के मानव समुदाय के लिए नहीं वरन् भू-मण्डल पर रहने वाले समस्त मानव समाज के लिए इनका पालन करना उपादेय और अपरिहार्य है। यम का अर्थ ही शासन और व्यवस्था बनाये रखने वाले नियमों से है। अभाव सर्वदा भाव निरूपण के अधीन रहता है। इसीलिए सूत्र ३० की व्याख्या में भाष्यकार व्यास जी ने लिखा है, "अशास्त्रपूर्वकं द्रव्याणां परतः स्वीकरणं स्तेयम्। तत्प्रतिषेधः पुनरस्पृहारूपमस्तेयमिति।" स्तेय को परिभाषित करते हुए उसके प्रतिषेध को अस्तेय कहा है। स्तेय वृत्ति अशास्त्र-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूर्वक है। किसी की आज्ञा के बिना किसी अन्य व्यक्ति के द्रव्यों का अपहरण करना स्तेय है। उसका प्रतिषेध ही नहीं प्रत्युत मन में अन्य व्यक्ति के द्रव्य को ग्रहण करने की इच्छा का अभाव ही अस्तेय कहा जाता है।

पातंजल योग में विवेचित यम को सार्वभौम महाव्रत कहा गया है। जैन और बौद्ध श्रमण परम्परा में वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था को अमान्य ठहराते हुए सभी वर्णों के लिए धर्म के द्वार खोल दिये गये हैं। ब्राह्मणों और पुरोहितों के सर्वश्रेष्ठ होने की मान्यता को भी धराशायी कर दिया गया है। इसी प्रकार आश्रम व्यवस्था में भी इन्हें दो ही आश्रम गृहस्थ और संन्यास रुचिकर लगे और तदनुरूप इन्हें अपने-अपने संघों के चार विभाग—साधु और साध्वी (मुनि-आर्यिका) अथवा भिक्षु और भिक्षुणी तथा श्रावक और श्राविका इष्ट हैं। अधिकारी की दृष्टि से जैन और बौद्ध दोनों परम्पराओं में साधु और साध्वियों के लिए इन व्रतों का अपवादरहित कठोरता से पालन करने का उपक्रम रचा गया। इसलिए इनके लिए ये महाव्रत समझे गये। गृहस्थ श्रावक और श्राविकाओं के लिए यथाशक्ति और क्षमता के अनुरूप इनके पालन का विधान किया गया। इसलिए इनके लिए ये व्रत अणुव्रत माने गये। इस तरह जैन और बौद्ध धर्मों में मानव संघ को दो आश्रमों और दो वर्णों में विभाजित किया है।

जहाँ तक मुझे विदित है मेरे अल्प अध्ययन के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि भगवान् महावीर ने व्रतों के पालन में कभी कोई ढील दी हो अथवा किसी व्यक्ति विशेष को समय-काल-परिस्थिति के आधार पर इनके पालन में कोई सुविधा (कंसेशन) दी हो मुझे ज्ञात नहीं है। तप और संयम के प्रसंग में वे सर्वदा असमझौतावादी ही बने रहे हैं। अपने व्रत पर अडिग रहना ही उनकी विशेषता है। 'न दैन्यं, न पलायनम्' अर्थात् शारीरिक कमजोरी या अशक्तता के कारण दीनता दिखलाना या कठोर संयम का पालन न करने के कारण भाग उठना महावीर शिक्षा नहीं है। क्योंकि महाव्रतों के पालन तथा अन्यत्र भी वे 'णो हीणे, णो अतिरित्ते (आचारांग सूत्र ७५) किसी को हीन या महान मानने के पक्ष में नहीं जान पड़ते। उनके मत में संयम की भट्टी में उग्र तप किये बिना कोई भी व्यक्ति जिन नहीं बन सकता। क्योंकि जीव दया, इन्द्रिय संयम, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, सन्तोष, सम्यक्ज्ञानदर्शन, तप ये सभी शील के ही परिवार हैं। [शीलपाहुड १९]

महर्षि पतंजलि और भगवान् महावीर की अपवादविहीन महाव्रत पालन करने की क्षमता धीरे-धीरे क्षीण होती गई और कालान्तर में जैन गृहस्थ श्रावक-श्राविका समाज ने भी बड़ी कुशलता तथा प्रावीण्य के साथ अपने लिए कंसेशनों-सुविधाओं की ढील जोड़ ली और गलियाँ ढूँढ़ लीं। कठोर संयम, उग्र तप-व्रतों का अपवादरहित पालन मुनि-आर्यिकाओं के जिम्मे छोड़ वह बरी हो गया। परिग्रह तथा स्तेय के नित नये हथकण्डे अपनाने लगा। जैन समाज ही इसका शिकार नहीं है अपितु सम्पूर्ण भारतीय या विश्व-मानव समाज इन बुराइयों से कहाँ बच पाया है।

जब तक व्यक्ति केवल अपने तक ही सीमित एकाकी रहता है तब तक उसके सामने महत्वाकांक्षा और उसकी पूर्ति हेतु परिग्रह या संग्रह अथवा चोरी, संग्रह के लिए शोषण-अपहरण, इस विधा को सुचारु अग्रसर करने के लिए बौद्धिक कौशल और शारीरिक शक्ति का विकास एवं बौद्धिक-शारीरिक बल के लिए विद्या का दुरुपयोग, दुरभिसंधि, स्पर्धा आदि समस्याएँ उत्पन्न नहीं होतीं। किन्तु अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति हेतु व्यक्ति ज्योंही समाज में प्रवेश करता है त्योंही वह अपनी दुर्बलता का प्रतिकार करने के लिए और महत्वाकांक्षा की पूर्ति हेतु स्पर्धा और शक्ति संचय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की अंधी दौड़ में लग जाता है। यह दौड़ उसे शोषण करना सिखाती है। शोषण से अव्यवस्था, अशांति, क्लेश, तनाव उत्पन्न होते हैं। उपद्रव, विद्रोह, विप्लव, युद्ध तथा संघर्ष आरम्भ हो जाते हैं। समाज का ढाँचा चरमराने लग जाता है। तब उसकी पुनर्व्यवस्था हेतु दण्डनीति, अनुशासन एवं न्याय व्यवस्था जन्म लेती है। मर्यादाहीनता को मिटाने के लिए धर्म संहिता तथा दण्ड संहिताओं का निर्माण किया जाता है। समाज की महत्वपूर्ण घटक इकाई होने के कारण व्यक्ति अपने आचार-विचार तथा प्रवृत्तियों द्वारा समाज के अन्य घटकों को भी प्रभावित करता रहता है। इसीलिए व्यक्ति की उच्छृंखलता-उद्दण्डता-स्वार्थ लोलुपता को रूपान्तरित करने के लिए महापुरुष समाज में व्रत विधान की एक ओर व्यवस्था संजोता है और दूसरी ओर भीषण यातनाओं सहित राजकीय दण्ड नीति द्वारा उस पर अंकुश भी लगाता है। यदि हर व्यक्ति नैतिक सदाचरण करे, ईमानदारी के साथ कर्तव्यपरायण हो जाये तो समाज में सुख-शान्ति और समृद्धि लायी जा सकती है। अतः समाज को सुसंगठित सुसंस्कृत, एवं सबल बनाने के लिए धर्माचरण के मूलमंत्र व्रतों को अपनाना अनिवार्य है। वैदिक तथा श्रमण परंपराओं में इसीलिए अपने-अपने ढंग से व्रतों को यम अथवा शील का अनिवार्य अंग बनाया गया है।

केवल छिपकर किसी की वस्तु को अथवा धन को चुराना ही अस्तेय नहीं है परन्तु किसी चोर को स्वयं या दूसरे द्वारा चोरी करने के लिये प्रेरित करना या कराना या अनुमोदन अथवा प्रशंसा करना तथा चोरी करने के लिए उपकरण प्रदान करना, चोरी के माल को बेचना या बिकवाना भी चोरी है।

वर्तमान संदर्भ में अस्तेय पालन की परम आवश्यकता है। कई दिन भूख से तंग आकर कोई भूखा व्यक्ति यदि किसी हलवाई की दुकान से कुछ खाने की वस्तु चुरा लेता है तो वह इतना गुनाहगार नहीं है जितने कि निम्नलिखित श्रेणी वाले लोग। नव श्रेणियों में इनको मुख्यतया बाँटा जा सकता है। इन श्रेणियों के लोग भिन्न-भिन्न प्रकार की चोरियों में अहर्निश लगे हुए हैं। अधिकांश लोग अस्तेय रोग से ग्रस्त हैं। अपनी ही अधिकार मर्यादा में सन्तुष्ट रहने वाले ईमानदार और कर्तव्यपरायण व्यक्ति आज अंगुली पर गिनने लायक ही होंगे। वस्तुतः चोरी करना गुलाब की सेज नहीं है वरन् यह साहस का कार्य है। प्रायः लोग चोरी करने की सोचते तो हैं पर वे मानसिक रूप से हिम्मत नहीं जुटा पाते। ऐसे लोग मौका लगते ही हाथ साफ करने में नहीं चूकते। अतः ये भी चौर्य कर्म के भागी हैं। मोटे तौर पर इन नव श्वेत हस्तियों के कारनामों का विवरण इस प्रकार अंकित किया जा सकता है—

१. **अधिकारजीवी सवर्ण**—संकुचित विचारधारा वाले संकीर्ण हृदय सवर्ण ऊंची जाति के कहलाने वाले समृद्ध तथा असमृद्ध अपने आपको धर्म का ठेकेदार मानने वाले लोग इस श्रेणी में समाविष्ट होंगे। ये तथाकथित ऊँची जाति वाले गरीब दीन-हीन पिछड़ी या नीची जाति के लोगों को अस्पृश्य समझने वाले लोग हैं जो उनके धार्मिक, सामाजिक, नागरिक अधिकारों को हड़पकर इठलाते हैं। ये लोग उनके जीवनोपयोगी अधिकारों का दिन-रात हरण करने में तल्लीन रहते हैं। जैन परम्परा ही नहीं वरन् सभी भारतीय दार्शनिक सम्प्रदायों ने जीवात्मा को ऊर्ध्वगमनशील मान्य किया है। आत्मोन्नति करना प्रत्येक मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है। यही नहीं, मानव देह पाकर अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित होने का प्रयास करना मानव का परम उद्देश्य या पुरुषार्थ भी है। सर्वोदय की रट लगाने वाले ये मदान्ध सवर्ण हरिजनों और निम्न जाति के निरीह-निर्दोष दीन-हीन जनों के झोंपड़ों में आग लगाकर, उन्हें धधकती ज्वाला में अपने प्राणों की आहूति देने के लिए बाध्य कर देते हैं। इस प्रकार उनके जीवित रहने के अधिकार को हड़प कर जाते हैं और जब वे लोग त्राण पाने के लिए धर्मान्तरण कर लेते हैं तो उन पर मगरमच्छी अश्रुपात करते हैं।

साध्वीरत्न कुसुमवती अभिनन्दन ग्रन्थ
Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. **धनजीवी, उद्योगपति, व्यापारी और साहूकार**—इस वर्ग में वे सब श्रावक-श्राविका तथा अन्य धनाढ्य श्रेणी के लोग समाविष्ट हैं जिनका तीर्थंकर, तथागत, भगवान्, अल्लाह या गॉड लाभ है। अनुचित लाभ कमाने की होड़ में ये कम तोलते हैं, चोरी का माल औने-पौने दामों में खरीदते हैं, चोरी करवाते हैं, वनस्पति में गाय की चर्बी, हल्दी में पीली मिट्टी, धनिये में भूसा आदि मिलाते हैं। यही नहीं नकली दवा निर्माण और उनमें मिलावट कर ये जन-जीवन से खिलवाड़ करते हैं। दूसरों को येन-केन-प्रकारेण ठगना इनका व्यापारिक कौशल बन गया है। ब्याज की ऊँची दर ऐंठकर महाराज साहब या मुनि या साधु की शरण में जा शांति खोजने का नाटक रचते हैं। टैक्स चोरी इनका प्रिय खेल है और बेईमानी शगल।

३. **रिश्वतजीवी राजकीय अराजकीय कर्मचारी और अधिकारी**—आज के समाज में ऐसा कोई विभाग शायद ही बचा हो जो किसी न किसी भ्रष्ट आचरण से अछूता हो। शासकीय और अशासकीय संस्थान भ्रष्टाचार के ज्वलंत अड्डे बनते जा रहे हैं। रिश्वत आज के युग में शिष्टाचार बन गयी है। जितनी बड़ी सीट उतना बड़ा दाम। बिना पैसे दिये मजाल है कि फाइल एक इंच भी आगे खिसक जाये। समय पर काम नहीं करना इनका जन्मसिद्ध अधिकार है। ठीक भी है, यदि समय पर आसानी से जनता का कार्य निपट जाये तो उन्हें क्या पागल कुत्ते ने काटा है जो इनको रिश्वत चुपड़ी रोटी डालें। कामचोरी देश को रसातल में ढकेल रही है। पर परवाह किसे है? छोटे कर्मचारी से अपना-अपना शेयर वसूल कर बड़े-बड़े अधिकारी सीधे भी व्यापारी और उद्योगपतियों से बहुत बड़ा अंशदान वसूलने में अहर्निश लगे हुए हैं।

४. **अवैध आयजीवी, डाक्टर, वकील, इन्जीनियर, ठेकेदार व जमींदार**—मुर्दे को डिस्टिल वाटर का इंजेक्शन लगा अपनी फीस वसूल करने में डॉक्टर अपने आपको कृतकृत्य समझ रहा है। आज बिना पैसे दिये मजाल है कोई मरीज ऑपरेशन थियेटर में पहुँच जाये अथवा उचित औषधि अस्पताल से पा जाये। दवायें चोरी से बेचना या मुँह देखकर बड़ों को तिलक लगाने के फलस्वरूप उन्हें महँगी दवायें मुफ्त देकर अपने लिए अन्य सुविधायें जुटाना डॉक्टरी का पवित्र व्यवसाय बन गया है। अस्पताल में जिम्मेदारी ड्यूटी से न कर घर पर क्लीनिक चला, दोनों हाथों से धन बटोरना इनका मुख्य व्यवसाय बन गया है। वकील दोनों पक्षों से मिलकर जजों को यथायोग्य दक्षिणा देकर निर्णय अपने पक्ष में करवाने में माहिर होते जा रहे है। न्यायालयों में फैसले कानून के अनुसार नहीं वरन् कितनी रकम कौन दे सकता है और जज को क्रय कर सकता है उस पर प्रायः निर्भर होते जा रहे हैं। बाबुओं को भूर-सी बँटवाने में भी वकीलों का हाथ रहता है ताकि वे उनकी जायज-नाजायज इच्छाओं की पूर्ति कर सकें। इंजीनियर और ठेकेदारों की साठ-गाँठ रेत से ढहने वाले बाँधों-पुलों-मकानों में कहर ढा रही है। बड़े-बड़े खेतों के स्वामी जमींदार स्वयं तो हल की मूठ नहीं पकड़ते पर खेतिहर मजदूरों को बन्धुआ बनाकर बेगार में जोत गुलछर्रे उड़ाते हैं। सब चोर हैं। चोरी करने के ढंग अलग-अलग हैं।

५. **चन्दाजीवी नेतागण**—विभिन्न बहाने लेकर नेताजी चन्दा बटोरने में दिन-रात लगे हुए हैं। मन्त्री, विधायक तथा सांसद भी इस कार्य में पीछे नहीं हैं। अपना सर्वस्व जनता के लिए न्यौछावर कर उसकी सेवा करने के दिन लद गये। आज सेठों और पूँजीपतियों के हाथों कठपुतली-सा नाच नाचने वाले तथा उच्च अधिकारियों के माध्यम से अपनी चौथ वसूलने वाले ये नेतागण रातोंरात लखपति और यदि चुन लिए गए तो अपने कार्यकाल में सात पीढ़ियों तक चलने वाला धन बटोर लेते हैं। चोर दरवाजा इनका साहूकारी का प्रमाण है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. **विद्याजीवी, शिक्षाविद्, पत्रकार-सम्पादक-प्रकाशक एवं लेखक**—आज शिक्षाविद् अपनी उच्च शिक्षा के बलबूते पर नये-नये हथकंडे खोजने में रत रहते हैं ताकि उनके पास भी नम्बर दो की आय की वर्षा होने लगे और वे भी लखपति बन कारों-बंगलों-कोठियों में ऐश करें। माँ शारदा का पुजारी भी लक्ष्मी की शरण में जाकर अपना पवित्र व्यवसाय बिसरा-सा रहा है। प्रकाशक-सम्पादकगण लेखकों का शोषण करना अपना फर्ज-सा मान बैठे हैं। लेखकगण भी परिश्रम न कर इधर-उधर की दो-चार किताबों से सामग्री चुराकर अपना नाम रोशन करने में लगे हुए हैं। पीत पत्रकारिता पत्रकारों का दूसरे रास्ते से पैसा ऐंठने का व्यवसाय बनता जा रहा है।

७. **श्रमजीवी कृषक और मजदूर**—'पैसा पूरा किन्तु काम नहीं' आज के श्रमिक का नारा है। पूरी मजदूरी पाकर भी कृषक, खेतिहर मजदूर तथा अन्य श्रमिकगण काम पूरा करना अपनी जिम्मेदारी नहीं समझता। बीड़ी पीना, सुस्ताना, धीमी गति से कार्य करना इनका शगल बन गया है। श्रम पर पलकर भी ये श्रम का मूल्य नहीं आँकते। उचित मजदूरी न पाने पर उसके प्रति विद्रोही स्वर उठाने का साहस इनमें नहीं होता। इसीलिए श्रमिक नेता इनके कन्धे पर बन्दूक रखकर अपनी स्वार्थ-सिद्धि की गोली आये दिन दागते रहते हैं। ईमानदार तथा हितैषी मालिक, जो आजकल बिरले ही हैं, उनके विरोध में भी ये हड़ताल का अस्त्र अपना कर उस उद्योग और उद्योगपति को धराशायी करने का प्रयास करते हैं।

८. **लूटजीवी, चोर-उच्चक्के, तस्कर एवं डाकू**—इन श्रेणियों के लोग तो घोषित चोर हैं ही। इनमें भी ऊँचे दर्जे के तस्कर और सट्टेबाज दिन के उजाले में भले मानुष तथा रात्रि के अन्धकार में काले कारनामे करते हैं। दिन दूना और रात चौगुना धन बटोर कर भी उनकी धनलिप्सा और हबस नहीं मिटती।

९. **परधनोपजीवी साधु-संन्यासी-मठाधीश-पण्डित एवं धर्म प्रचारक**—प्रातः स्मरणीय पूजनीय जैन साधु-मुनिगण वास्तव में स्तुत्य हैं क्योंकि वे अन्य मठाधीशों की भाँति किसी प्रकार का कोई परिग्रह नहीं पालते। अस्तेय का पालन कैसा होता है इनसे सीखा जाना चाहिए। ये जनता को अस्तेय की ओर प्रेरित करते हैं। अन्य मतों में भी नागा परमहंस उच्च कोटि के हैं जो समाज को देते ही देते हैं बदले में तृण की इच्छा भी नहीं रखते। किन्तु इनकी संख्या नगण्य मात्र है। शेष सभी मठाधीश कभी किसी यज्ञ, कभी किसी अनुष्ठान, कभी किसी मन्दिर का निर्माण आयोजित कर धर्म की आड़ में अपनी रोटियाँ सेकते हैं। समाज के पैसे पर इनमें कई सुरा और सुन्दरी की मौज में ऐश कर रहे हैं। न कोई काम, न कोई चिन्ता।

यद्यपि जितने चोर हैं उतने ही उनके चोरी के ढंग हैं। 'चोर अनन्त चोरी अनन्त' फिर भी सुविधा की दृष्टि से समस्त चोर कर्मों को उक्त नवकोटियों में रखा जा सकता है। अस्तेय पालन में किसी प्रकार की कोई छूट नहीं है। चार प्रकार की हिंसाओं में से जीवन संरक्षण हेतु कुछ हिंसा तो करनी ही पड़ेगी। 'जीवो जीवस्य भोजनम्'—जीव ही जीव का भोजन है। इस सिद्धान्त के अनुसार संसार में रहकर मानव ही नहीं प्राणीमात्र पूर्ण अहिंसक नहीं बन सकता। जीवन जब दाव पर लगा हो तो वहाँ असत्य भाषण भी क्षम्य बतलाया गया है। जीवन-यापन करने के लिए कुछ न कुछ परिग्रह तो पालना ही होगा तथा संतानोत्पत्ति और संसार चलाने हेतु ब्रह्मचर्य की भी छूट सभी आचार शास्त्रों में दी गयी है। बाल ब्रह्मचारी रह कर इस कमी को संन्यासीगण पूरा करने का प्रयास करते हैं किन्तु चैल या अचैल (वस्त्रधारी या दिगम्बर) साधुगण भी स्तेय को किसी भी अवस्था में नहीं अपना सकते। इसी प्रकार गृहस्थगण भी चौर्य

(शेष पृष्ठ ३२७ पर)

साध्वीरत्न कुसुमवती अभिनन्दन ग्रन्थ
Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org